'सेज़' (विशेष आर्थिक क्षेत्र) और भूमि–अधिग्रहण

एक ग़ैर–संवैधानिक आर्थिक नीति

क्या है 'सेज़'?

'सेज़' यानी विशेष आर्थिक क्षेत्र, ख़ास तौर से घेरा गया ज़मीन का एक इलाका है, जिसका मालिक एक निजी कम्पनी है और वही उस पर शासन करता है। व्यापार, कर और टैक्स की दृष्टि से यह एक विदेशी इलाका माना जाता है। इस तरह के इलाकों में आयकर, बिक्रीकर, कस्टम ड्यूटी, सेवा कर इत्यादि लागू नहीं होंगे। जून 2005 में भारत की संसद ने 'सेज़ कानून' पास किया और फ़रवरी 2006 में यह लागू हो गया, हालांकि गुजरात जैसे कुछ राज्यों ने 2004 में ही राज्य स्तर पर 'सेज़' कानून बना लिया था।

बंगाल में 'सेज़' के विरुद्ध मोर्चा – (द हिन्दु)

'सेज़' की ज़रूरत?

पूरे देश में 'सेज़' बनाने का घोषित कारण है "निर्यात को बढ़ावा देना।" वाणिज्य व उद्योग मन्त्री श्री कमलनाथ का दावा है कि निर्यात पाँच गुना बढेंगे, सकल घरेलू उत्पाद 2% बढ़ेगा और पूरे भारत में 30 लाख लोगों को नौकरी मिलेगी। सरकार का यह भी दावा है कि सीधे विदेशी विनिवेश (एफ.डी.आई.) के ज़रिए विश्व स्तर के खिलाड़ियों के कारखानों के उत्पादन को आकर्षित किया जाएगा, आधुनिक तकनीक को लाया जाएगा और ढाँचागत विकास (यातायात, सम्प्रेषण आदि) के लिए प्रोत्साहन मिलेगा।

कितने सेज़?

- केन्द्र सरकार ने 19 राज्यों में (86.107 हेक्टेयर ज़मीन पर) 237 'सेज़' बनाने की मंजूरी दे दी है।
- इनमें से 63 'सेज़ो' को (यानी जन–सूचना द्वारा) नोटिफ़ाई भी किया जा चुका है।
- 23 'सेज़' चालू हैं, इनमें से 18 सूचना तक़नीक (आई. टी.) के क्षेत्र में हैं।
- अन्ततः 500 'सेज़' बनाने की योजना है।
- पूरे भारत में अधिग्रहीत की जाने वाली ज़मीन है – 150,000 हेक्टेयर (जो पूरे राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के बराबर है)। यह ज़मीन मुख्यतः खेती की ज़मीन है, जिस पर बहुत तरह के अनाज पैदा किए जाते हैं। इनमें क्षमता है 10 लाख टन अनाज पैदा करने की। अगर भविष्य में यह समझा जाता है कि 'सेज़' सफल हैं तथा खेती की और ज़मीन अधिग्रहीत की जाती है तो देश की खाद्य–सुरक्षा ख़तरे में पड़ जाएगी।

सेज़ के अभी तक के अनुभव क्या रहे हैं?

आज की तारीख में पूरी दुनिया में 400 से कम 'सेज' हैं। भारत की सरकार एक ही देश में इतनी संख्या में 'सेज' बनाना चाहती है।

	चीन	भारत
संख्या	7	अन्ततः 400–500
कब शुरू	1980	ज़्यादातर 1991 के बाद
प्रजातान्त्रिक निर्णय प्रक्रिया	सेज़ बनाने से पहले चर्चा और वाद–विवद	कोई चर्चा नहीं। संसद ने आसानी से कानून पास कर दिया
माप	बहुत बड़े (शेन्ज़ने 32700 हेक्टेयर)	छोटे 3–14000 हेक्टेयर
मालिक कौन	सरकार	निजी कम्पनियाँ
किस तरह की ज़मीन	ज़्यादातर समुद्रतट की बंजर ज़मीन	ज़्यादातर उपजाऊ कृषिभूमि
निर्यात	बेहतरीन, (शेन्ज़ेन 2006 का कुल निर्यातः 35 बिलियन डॉलर)	अभी तक मन्दा (1998 में 1.04 बिलियन डॉलर विदेशी मुद्रा कमाने के लिए 1.67 बिलियन डॉलर की कस्टम ड्यूटी माफ़ की गई)
रोज़गार	कम वेतन के काफ़ी रोज़गार बने	अभी तक बेहद सीमित, मार्च 2005 तक सभी 'सेज़' में कुल 100650 रोज़गार
कर द्वारा	कर–रियायत सीमित मात्रा में प्राप्त रकम	कम्पनियों को हर तरह के करों से छूट
आर्थिक सफलता	शेन्ज़ेन पूर्णतः सफल पर अन्य 'सेज़' असफल	अभी तक असफल
ज़मीन अधिग्रहण करने की आसानी	अभी भी कुछ इलाकों में ज़मीन के लिए लड़ाई जारी	रक्तरंजित कटु विरोध

विस्थापन और आजीविका की हानि

अनुमानतः 114000 कृषि–परिवार (एक परिवार में औसतन 5 सदस्य), और साथ ही 82000 खेतिहर परिवार, जो जीविका के लिए इन खेतों पर आश्रित हैं, विस्थापित होंगे। दूसरे शब्दों में, कम से कम 10 लाख लोगों के सामने, जिनका मरना जीना खेती के ही ऊपर निर्भर है – विस्थापन मुँह बाए खड़ा है। विशेषज्ञों के गणित के अनुसार, खेती तथा खेतिहर परिवारों की आय में कम से कम 212 करोड़ रुपए सालाना का नुकसान होगा। इसमें वैसी आय नहीं शामिल है जो ग्रामीण अर्थव्यवस्था के टूटने से प्रभावित होगी (जैसे दस्तकारों की आय)। सरकार वादा करती है कि विस्थापन 'मानवीय' होगा और उसके बाद राहत कार्य और पुनर्वास भी होगा। परन्तु इस सन्दर्भ में ऐतिहासिक आँकड़े उम्मीद की किरण नहीं जगाते। विकास की बड़ी परियोजनाओं की वजह से, 1950 से लेकर आज तक, अनुमानतः 4 करोड़ लोगों को उनकी ज़मीन से बेदख़ल किया गया है। इनमें करीब 40% आदिवासी हैं और 25%दलित। इनमें से कम से कम 75% लोग अभी भी पुनर्वास के इन्तज़ार में हैं। खेतिहर आबादी के तकरीबन 80% को समूची कृषि–भूमि के 17% ज़मीन पर मालिकाना हक़ है, जिससे वे भूमिहीन किसान ही कहे जा सकते हैं। जिनके पास ज़मीन है, उनसे कहीं ज़्यादा संख्या में उन परिवारों और समुदायों की हैं। जो ज़मीन के टुकड़े पर आजीविका के लिए निर्भर हैं (जैसे खेतों में काम, गाय–बकरी चराना आदि)। ग़ौर–ए–तलब है कि मुआवजे की बात सिर्फ़ उनके लिए की जा रही है जिनके पास ज़मीन के पट्टे हैं। जिनके पास ज़मीन नहीं है उनके लिए किसी मुआवज़े की योजना नहीं है।

क्या 'सेज़' से नौकरियाँ बढ़ेंगी?

1991 में नई आर्थिक नीति की शुरुआत के बाद से पूरे संगठित क्षेत्र में रोज़गार–विकास नामचार के लिए हुआ है। संगठित क्षेत्र में अभी भी 3 करोड़ से कम रोज़गार हैं। आई.टी. (सूचना–उद्योग) और इससे जुड़े हुए क्षेत्रों में भी (जो देश की अर्थ–व्यवस्था के शिखर–क्षेत्र माने जाते हैं), 0.15 करोड़ से कम रोज़गार हैं। और 60% 'सेज़' आई.टी. के क्षेत्र में हैं। भारत में कामगार मजदूरों की संख्या 45–55 करोड़ है। बढ़ते हुए मशीनीकरण के चलते, पूरी दुनिया में आधुनिक उत्पादन, बिना रोज़गार बढ़ाए विकसित होता जा रहा है। भारत में कार–उत्पादन ख़ूब जल्दी बढ़ा है, और उसमें आज पहले से कम मजदूर रखे जाते हैं। मशीनीकरण तेज़ रफ़्तार से बढ़ रहा है। इससे संगठित सेवाओं के लिए भी बहुत कम श्रम की ज़रूरत पड़ती है। सफल होने के लिए 'सेज़' आधुनिक उद्योग और सेवाओं को आकर्षित करेंगे। अतः इस बात की उम्मीद कम है कि उनसे रोज़गार बढ़ेंगे। फिर जो थोड़े–बहुत रोज़गार उपलब्ध होंगे भी, उसमें विशेष हुनरों की ज़रूरत होगी, जो सामान्यतः ग्रामीण क्षेत्रों में नही है – जिन इलाकों से कामगार लोगों को निकाला जा रहा है 'सेज़' के लिए। कमलनाथ का दावा कि दो चार वर्षों में 30 लाख रोज़गार खड़ें होंगे कोरी कल्पना है। इतने रोज़गार तो 1991 में आर्थिक सुधारों की शुरूआत से लेकर आज तक नहीं निर्मित हुए हैं। कितने रोज़गार ख़त्म हुए इसकी जानकारी सरकार कभी नहीं देती, सिर्फ़ बताती है कि इतने रोज़गार बने। इसके अलावा आज के 'सेज़' चाहे दिल्ली के पास नोएडा हो या चीन में शेन्जेन – अलग ही कहानी कहते हैं। लोगों को काम की जिस तरह की स्थिति में जीना

पड़ता है – कम तनख़्वाह, अन्य लाभों से वंचित, काम के लम्बे घन्टे, काम के ख़तरे, भेदभाव, इत्यादि – वह हर हालत में मानवअधिकारों का उल्लघंन करता है। साथ ही वह विकास के फ़ायदों से ग़रीबों को दूर रखता है।

कॉर्पोरेट नगर–राज्य की नई अवधारणा?

रिलायन्स कम्पनी द्वारा बनाई जा रही महामुम्बई 'सेज़' की तरह बहुत से 'सेज़' एक मझोले शहर की तरह होंगे, 100 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में (चंडीगड़ जैसे शहर के बराबर)। इनमें कोई भी निर्वाचित स्थानीय सरकार नहीं होगी। सरकार द्वारा नियुक्त एक 'विकास कमिश्नर', 'सेज़' पर शासन करेंगे। उनका मुख्य उद्धेश्य होगा आर्थिक विकास की प्रक्रिया को बढ़ाना। औद्योगिक झगड़े के कानून के तहत 'सेज़' को "सार्वजनिक सुविधाओं" के अन्तर्गत रखा गया है। इनमें सामूहिक मोल–भाव और हड़ताल ग़ैर कानूनी करार दिए गए हैं। पानी, बिजली, सड़क जैसी बुनियादी सुविधाओं की गारन्टी विनिवेश व विकास करने वाली कम्पनियों को दी जा रही है, उस क्षेत्र के लोगों को नहीं। एक 'सेज़' में कई लाख लोग रहेंगे या काम करेंगे। कई जगह इन कम्पनियों को बुनियादी सेवाएँ मुहैय्या कराने के लिए वहाँ रहने वाले लोगों पर टैक्स लगाने का अधिकार होगा। निजी एकाधिकार रखने वाली कम्पनियाँ शहरी आबादी के बड़े हिस्सों के लिए, बिना निर्वाचन के, स्थानीय सरकारें चलावें – क्या यह संवैधानिक रूप से सही है? ज़मीन से संबंधित, भारतीय पीनल कोड और दीवानी कोड के ग़ैर–आर्थिक कानून 'सेज़' पर लागू होंगे। परन्तु 'सेज़'

के अन्दर की सुरक्षा, विकास करने वाली कम्पनी की ज़िम्मेदारी होगी। क्या ये 'सेज़' अन्ततः सार्वभौमिक राज्य बन जाएँगे – ग़रीबी और पीड़ा के सागर में वैभव के टापू – जिनकी, पड़ोस के बहुसंख्यक नागरिकों के प्रति कोई जवाबदेही नहीं होगी?

सरकारी आमदनी का नुक़सान

वित्त मंत्रालय का अन्दाज़ा है कि कस्टम ड्यूटी, आयकर, बिक्री कर, एक्साइज़ ड्यूटी, सर्विस टैक्स (होटल, शापिंग माल, हेल्थ क्लब, मनोरंजन–केन्द्र इत्यादि पर) सेवा कर जैसे करों की छूट की वजह से सरकारी ख़ज़ाने को 2010 तक रु. 1,60,000 करोड़ का घाटा भुगतना पड़ेगा। वित्त मन्त्रालय ने 'सेज़' की संख्या 100 तक सीमित करने के लिए कहा है। वित्तमन्त्री श्री पी.चिदम्बरम ने मंत्रिमंडल के अपने साथियों को लिखा है : "अपने आप में 'सेज़', ज़मीन, पूँजी और श्रम की लागत को विकृत करेंगे। इससे चालाक तरीकों से उद्योगों के पुनर्स्थापन या तबादले को प्रोत्साहन मिलेगा, जिन्हें रोका नहीं जा सकेगा। बड़े शहरों के पास बड़ी संख्या में 'सेज़ों' का पनपना इस प्रवृत्ति को और बढ़ावा देगा।" हर साल सरकारी ख़जाने को जो नुक़सान उठाना पड़ेगा वह रक़म, 'राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी योजना' के लिए निर्धारित सालाना ख़र्चे से पाँच गुना अधिक है। यह रकम एक साल से देश के 5.50 करोड़ भूखे लोगों का पेट भरने के लिए काफ़ी है। साथ ही आयकर पर भी छूट है – (केवल उन विनिवेश करने वालों के लिए ही नहीं जो निर्यात करने वाले उत्पादन करेंगे, बल्कि भू–विकास करने वालों के लिए भी)। इससे विदेशी पैसों

का भी नुक़सान होगा – फ़ायदा तो होगा नहीं। 1991–92 से 1996–97 के पाँच सालों के दरमियान 'सेज़ों' में आयातीत वस्तुओं के करों और कस्टम ड्यूटी को मिलाकर रु. 16461.58 करोड़ विदेशी पैसे का घाटा उठाया गया। इसके बदले में केवल रु. 13563.87 करोड़ का निर्यात हुआ।

'सेज़' या 'रेज़' (ज़मीन–कब्ज़ा इलाका) क्या 'सेज़', दैत्याकार भू–व्यापार का घोटाला है?

दो चार वर्षों में 'सेज़ों' की शक्ल क्या होगी? 'सेज़' कानून (धारा 5(2)) के तहत, 1000 हेक्टेयर से ज़्यादा के 'सेज़ों' में इलाके का 75% भाग ग़ैर औद्योगिक कामों के लिए इस्तेमाल किया जा सकेगा। बाकी की ज़मीन का क्या इस्तेमाल होगा? कानून की इस ख़ामी का इस्तेमाल हो सकता है– ढेरों ज़मीन इकट्ठी करने के लिए। ज़मीन का जुआ खेलने वाली निजी विकास कम्पनियाँ और प्रापर्टी डीलर इस खेल में आगे होंगे। इसीलिए भूमाफ़िया के बहुत से लोग 'सेज़ों' में ज़मीन बटोरने में जुटे हुए हैं। सम्भव है कि 'सेज़' कानून की ऊपर रेखांकित धारा को 'सेज़ों' में ज़मीन बटोरने में जुटे हुए हैं। सम्भव है कि 'सेज़' कानून की ऊपर रेखांकित धारा को तर्कसंगत बनाने के लिए आर्थिक आकर्षण के इर्द गिर्द अनिश्चितता बनाई गई है (जो 'सेज़ों' को अन्ततः सफल दिखाने के लिए है)। यदि भरपूर उत्पादक विनिवेश नहीं आ रहा है तो 'सेज़ों' के 'डेवलपर' कम से कम कीमती ज़मीन को तो भुना ही सकते हैं। रिलायन्स जैसे बड़े औद्योगिक घराने आज ग्रामीण अंचलों में 100,000 एकड़ से ज़्यादा ज़मीन के मालिक हैं।

साथ ही जनवरी 2007 से सरकार ने ज़मीन की ख़रीद–फ़रोख़्त के लिए सीधे विदेशी विनिवेश को मंजूरी दे दी है। इससे ज़मीन में विनिवेश के लिए वृहत् अन्तर्राष्ट्रीय रकम को दाव पर लगाने के लिए पूरी तरह से दरवाज़े खोल दिए गए हैं। भूमि–बँटवारा सुधार हमारा पुराना सपना था जिसके तहत वादा था 'ज़मीन उसकी जो बोएगा'। इसे तिलान्जलि देकर भारत की सरकारों की आज प्रवृत्ति है कि ज़मीन की मिल्क़ियत और इस्तेमाल पर से सारे प्रतिबंध हटा दिए जाएँ। इससे बड़े औद्योगिक घरानों का ही स्वार्थ सिद्ध होता है। यह ग़ौर–ए–तलब है कि 'सेज़' में ज़मीन के नाप पर कोई कानूनी सीमा नहीं है।

'सेज़' : कहाँ–कहाँ कानून तोड़े जा रहे हैं?

2005 के 'सेज़' एक्ट के तहत मुख्य कानूनी जुर्म ये हैं :

- वह भारत के संविधान की आत्मा और भाषा के आदिवासियों के अधिकार और नियन्त्रण दिलाने के लिए बने थे।
- मानव–अधिकारों पर बने अनेकों अन्तर्राष्ट्रीय कन्वेंशनों का यह उल्लघंन करता है।
- अनेक श्रम कानून या तो लागू नहीं होंगे या उनमें ढील दी जाएगी। (जैसे औद्योगिक झगड़े एक्ट, कान्ट्रेक्ट श्रम एक्ट, फ़ैक्ट्री एक्ट, न्यूतम वेतन एक्ट, ट्रेड यूनियम एक्ट)
- सेज़ों पर पर्यावरण सुरक्षा कानून नहीं लागू होता।

उन्हें पर्यावरण मन्त्रालय के मंजूरी की ज़रूरत नहीं है।

- स्थानीय स्व–शासन के लिए बने पंचायती राज कानून (1996) का भी यह उल्लघंन करता है।
- यह उन कानूनों को भी तोड़ता है जो ज़मीन पर आदिवासियों के अधिकार और नियन्त्रण दिलाने के लिए बने थे।
- मानव–अधिकारों पर बने अनेकों अन्तर्राष्ट्रीय कन्वेंशनों का यह उल्लघंन करता है।

ग्रामीण जीवन और आजीविका के लिए प्रतिरोध–आन्दोलन

नवी मुम्बई में रिलायन्स के 'सेज़' के विरुद्ध किसानों की सभा (फ्रन्ट लाइन)

पिछले बीस वर्षों में भारत की राजनैतिक धरा ने "हज़ारों बगावतें" देखी हैं। हर क्षेत्र, हर राज्य में जन–आन्दोलन उठ खड़े हुए हैं। जब अपनी खुद की सरकारें, बड़ी–बड़ी राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय कम्पनियों के साथ लोगों की आजीविका और प्राकृतिक संसाधन लूट रहे हैं, तो क्या लोग चुप बैठें? यहाँ इन बग़ावतों की हल्की सी झलक भर है।

दक्षिण भारत में

- केरल के प्लाचीमाडा इलाके में कोका–कोला के विरुद्ध संघर्ष। पानी की कमी और इलाके के प्रदूषण के लिए कोका–कोला को ज़िम्मेदार ठहराया गया है। 'कोका कोला विरुद्ध समर समिति' के नेतृत्त्व में मार्च 2004 में, लोगों ने कोका कोला के बॉटलिंग प्लांट को बन्द होने के लिए मजबूर किया।
- वयानाड केरल में मुथुंगा में जंगल ज़मीन संघर्ष। नेतृत्त्व है 'आदिवासी गोथरा सभा का, जिसकी नेता सी.के. जानू हैं। यह संघर्ष आदिवासी ज़मीन पर आदिवासी हक़ के लिए है।
- कर्नाटक में बंगलोर–मैसूर हाइवे के लिए किए जा रहे ज़मीन अधिग्रहण के ख़िलाफ़ किसानों का मोर्चा।
- कृष्णा नदी में रिलायंस खनिज–पदार्थ के लिए जो खुदाई करवा रहा है, उसके विरुद्ध जन–संघर्ष।

पश्चिमी एवं मध्य भारत

- ज़मीन अधिकार आन्दोलन के नेतृत्त्व में महाराष्ट्र के मराठवाड़ा क्षेत्र में गयरान (चराई की ज़मीन) के लिए दलित–संघर्ष।

- महाराष्ट्र के सिन्धु दुर्ग जिले में रिलायन्स गैस लाइन के विरुद्ध संघर्ष।
- वृहत्तर मुम्बई में रिलायन्स द्वारा 'सेज़' के लिए अधिग्रहीत की जा रही ज़मीन के विरुद्ध
- वृहत्तर मुम्बई में रिलायन्स द्वारा 'सेज़' के लिए अधिग्रहीत की जा रही ज़मीन के विरुद्ध किसान–मोर्चा।
- 'सेज़' के लिए इंडिया बुल्ज़ द्वारा रायगढ़ में ज़मीन अधिग्रहण के ख़िलाफ़ '26 गाँव बचाओ संघर्ष समिति' का संघर्ष।
- उम्बेरगाँव (गुजरात) में बड़े बन्दरगाह की योजना के विरुद्ध मछुआरों का संघर्ष।
- काला डेरा राजस्थान में 'जन संघर्ष समिति' का कोका कोला के ख़िलाफ़ संघर्ष।
- पिछले 20 वर्षों से अधिक समय से 'नर्मदा बचाओ आन्दोलन' ने बड़े बाँधों व लोगों के विस्थापन के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाई है। पुनर्स्थापन, इंसाफ़ और बड़ी योजनाओं के भयंकर नतीजों जैसे मुद्दों को आन्दोलन मुख्यधारा में ले आया है।
- छत्तीसगढ़ में शिवनाथ नदी की 23.6 किलोमीटर लम्बाई रेडियस वॉटर कम्पनी को बेच दी गई है। इस निजीकरण के विरुद्ध जन आन्दोलनों का राष्ट्रीय समन्वय, 'अखिल भारतीय युवा परिषद', नदी घाटी संघर्ष समिति और 'छत्तीसगढ़ मुक्तिमोर्चा' मिल कर नदी किनारे के वासियों को एकजुट कर रहे हैं।

पूर्वी अंचल

- विस्थापन के विरुद्ध काशीपुर, गोपालपुर, कलिंग नगर (उड़ीसा) में संघर्ष।
- 'सेज़' और विस्थापन के विरुद्ध पश्चिम बंगाल के सिंगूर और नन्दीग्राम के संघर्ष।
- जादूगोड़ा (झारखंड) में यूरेनियम–खुदाई व विस्थापन के ख़िलाफ़ आदिवासी संघर्ष।
- झारखंड में कोयलकारो जन संगठन के झंडे तले बिजली योजना (राँची से 80 किलोमीटर) के ख़िलाफ़ जन आन्दोलन। यह योजना तीन दशकों से ठण्डे बस्ते में पड़ी है।

उत्तर पूर्वी अंचल

- असम में पहलादिया बाँध और जल संसाधनों के निजीकरण के खिलाफ़ संघर्ष।
- असम में जंगलों से जबरन निकाले जाने के विरुद्ध दोयांग और तोन्गानी में जन–आन्दोलन।
- मणीपुर में तिपियामुख मल्टीपर्पज़ पानी बिजली परियोजना के खिलाफ़ संघर्ष।

उत्तरी अंचल

- उत्तर प्रदेश में वाराणसी के पास मेंहदीगंज में कोकाकोला के विरुद्ध संघर्ष।

- दिल्ली में पानी के निजीकरण के ख़िलाफ़ संघर्ष।
- झझ्झर (हरियाणा) में रिलायन्स के 'सेज़' के विरुद्ध किसानों का संघर्ष।
- बरनाला (पंजाब) में ट्राइडेन्ट 'सेज़' के लिए भूमि–अधिग्रहण के ख़िलाफ़ किसानों का संघर्ष।

नागरिक शोध समूह
(एन 14ए साकेत, नई दिल्ली–110019)
द्वारा तैयार किया गया पर्चा
ई–मेल : sez.crc@gmail.com

Voluntary contributions accepted